Vol. 6, Issue: 12, December: 2018
ISSN:(P) 2347-5404 ISSN:(O)2320 771X

गायन के गुण एवं दोष

डॉ. मनीष डंगवाल
असिस्टेंट प्रोफेसर व विभाग प्रभारी,
संगीत विभाग,
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
रानीखेत ,उत्तराखण्ड

१. प्रस्तावना

मानव समाज की जीवन शैली का एक महत्वपूर्ण पक्ष–संगीत, भी मनुष्य के उपरोक्त स्वभाव से अछूता नहीं है। प्राचीन काल से ही विद्वान–जन, संगीत कला के विशिष्ट अंग–गायन के गुणों एवं दोषों पर विचार व्यक्त करते रहे हैं तथा कलाकारों एवं विद्यार्थियों के लिए, उनका निर्देश करते रहे हैं। संगीत कला के ग्रन्थ नाट्यशास्त्र में गान के गुण–दोषों के वर्णन प्राप्त होते हैं। इसके अतिरिक्त परवर्ती अनेक ग्रन्थों में भी इस विषय पर उल्लेख प्राप्त होते हैं। ग्रन्थों में वर्णित गान गुण–दोषों पर विस्तृत व्याख्याएँ प्राप्त होती हैं। अतः उनके स्पष्ट एवं समुचित ज्ञान के लिए हैं। ग्रन्थों का अध्ययन, उस–ग्रन्थ के परवर्ती ग्रन्थों की पृष्ठभूमि पर किया जाना आवश्यक है। प्राचीन भारतीय संगीत शास्त्र में गान गुण–दोष बहुत महत्वपूर्ण थे। इनसे गायन की गुणवत्ता को परखा जाता था और गायक के कौशल को मापा जाता था। प्राचीन ग्रंथों में इन गुणों और दोषों का विस्तृत वर्णन मिलता है, जिनके अध्ययन से गायन की तकनीकी और सांगीतिक पक्षों को समझा जा सकता है।

२. भरत मुनि काल

भरत मुनि ने नाट्यशास्त्र ग्रन्थ के तैंतीसवें अध्याय के अन्तर्गत गान के गुण–दोषों का उल्लेख किया है। भरत मुनि ने गायक एवं गायिका के गुणों पर प्रकाश डालते हुए कहा है –

गाता प्रत्यग्रवयाः स्निग्धो मधुरस्वरोपचितकण्ठः।
लयतालकलापात प्रमाणयोगेषु तत्वज्ञः।।
,रूपगुणकान्ति युक्ता माधुर्यो पेत सत्वसम्पन्नाः।
पेशलमधुरस्निगधानुनादिसमरक्त गुरू (शुभ) कण्ठाः ।।
सुविहितगमकविधायिन्योऽक्षोभ्यो (भ्यास्) काललयकशलाः।
आतोद्यार्पितकरणा विज्ञेया गायिकाः श्यामाः।।

अर्थात् स्निग्ध तथा मधुर स्वर युक्त कण्ठ एवं लय, ताल, कला, पात व प्रमाण को तत्व से जानने वाला (श्रेष्ठ) गायक है। रूप–गुण कान्ति युक्त, माधुर्य से युक्त, सत्व (गुण) सम्पन्न तथा पेशल, मधुर, स्निग्ध, अनुनाद युक्त, सम, रक्त व गुरू (गम्भीर) कण्ठ युक्त, गमक को भली प्रकार जानने वाली, ताल–लय कुशला, वाद्य वादन जानने वाली गायिका श्यामा है। यद्यपि भरत मुनि ने गायक तथा गायिका के गुणों में भेद माना है किन्तु दोनों प्रकार के गुण दोनों (गायक तथा गायिका) के लिए ही समीचीन भान होते हैं। भरत मुनि द्वारा उल्लिखित गायक–गायिकाओं के गुणों में ही, भरत मुनि द्वारा मान्य गान के गुणों के संकेत प्राप्त हो जाते हैं। भरत मुनि के उपरोक्त कथन के अध्ययन से ज्ञात होता है कि गायन में स्निग्ध, माधुर्य, अनुनादात्मक कंठ, सम, रक्त, गुरू (गम्भीर) कण्ठ, गमक के सुबोधत्व के अतिरिक्त लय, ताल,

कला, पात, प्रमाण आदि अंगों का समुचित प्रयोग आवश्यक माना गया है। तात्पर्य यह कि इन सभी तत्वों की विशेषज्ञता गायन का गुण है।

भरत मुनि ने गायक गायिका के गुणों का उल्लेख करने के पश्चात् स्वयं स्पष्ट रूप से कण्ठ के छः गुण माने हैं –

श्रावको (णो) ऽथ घनः स्निग्धो मधुरो ह्मवधानवान्।
त्रिस्थानशोभीत्येवं तु षट् कण्ठस्य गुण मताः।।

अर्थात् कण्ठ के छः गुण माने गए हैं – श्रावक, घन, स्निग्ध, मधुर, अवधानवान् तथा त्रिस्थानशोभी। भरत मुनि ने इन कण्ठ–गुणों की व्याख्या प्रस्तुत करते हुए कहा है –

उदात्तं श्रूयते यस्मात्तस्माच्छ्रावक (ष) उच्यते।
श्रावकः (णः) सुस्वरों यस्मादच्छिनः स घनो मतः।।
अरूक्षध्वनिसंयुक्त स्निग्धस्तज्ञैः प्रकीर्तितः।
मनः प्रल्हादनकरः स वै मधुर उच्यते।।
स्वरेऽधिके च हीने च ह्मविरक्तो वि (ऽव) धानवान्।
शिरः कण्ठेष्वभिहितं (हतस्) त्रिस्थानमधुरस्वरः।
त्रिस्थानशोभीत्येवंत्ुस हि तज्ञैरूदाहृतः।।

जो ऊँचा सुनाई देता है वह 'श्रावक' कहलाता है। अर्थात तार स्थान में भी स्पष्ट गायन करने के कण्ठ–गुण को **श्रावक** कहते हैं। श्रावक अर्थात् ऊँचे स्थान में गायन, के साथ ही जो सुस्वर युक्त तथा अछिन्न गुण युक्त है वह कण्ठ गुण 'घन' कहा गया है। तात्पर्य यह कि जिस कण्ठ–गुण के अंतर्गत तार स्थान में भी गान सुस्वर (सुरीला) रहता है तथा वह स्थान–स्थान पर भंग नहीं होता वह **घन** है। जो कंठ गुण रूखी ध्वनि से हीन होता है वह 'स्निग्ध' कहलाता है। भरत मुनि के इस मत से बोध होता है कि जिस कण्ठ में मृदु तथा मधुर गुण हो वह **स्निग्ध** है। भरत मुनि के अनुसार मन को आनन्दित करने वाला कण्ठ '**मधुर**' है। स्वरगत आधिक्य और हीनत्व की दशा में भी जब ध्वनि में अंतर नहीं हो तो उस कण्ठ गुण को 'अवधानवान्' कहा जाता है। तात्पर्य यह कि जब गायन के अंतर्गत स्वर में उत्पन्न हुए, किसी भी प्रकार के परिवर्तन का प्रभाव, कण्ठ से उत्पन्न होने वाली ध्वनि पर नहीं पड़ता अर्थात् स्वर में होने वाला परिवर्तन कण्ठ–ध्वनि को विचलित नहीं करता तो कण्ठ में स्थित वह गुण **अवधानवान्** कहलाता है। तीनों स्थानों (मन्द्र, मध्यय व तार) में मधुर स्वर युक्त **'त्रिस्थानशोभी'** कण्ठ गुण कहलाता हैं।
यद्यपि भरत मुनि ने उपरोक्त कण्ठ–गुणों का विस्तृत उल्लेख किया है तथापि स्व–मत की चर्चा करने से पूर्व उन्होंने गान के अन्य गुणों का भी नामोल्लेख किया है –

पूर्णस्वरं चाऽथ विचित्रवर्ण
त्रिस्थानशोभि त्रिलयं त्रिमार्गम्।
रक्तं समं श्रलक्ष्णमलङ्कृतं च
सुखं प्रशस्तं मधुरं च गानम्।।

भरत मुनि ने गान के इन विभिन्न गुणों की व्याख्या प्रस्तुत नहीं की है। भरत मुनि ने कण्ठ–गुण के समान ही कण्ठ के दोषों का भी उल्लेख किया है –

कपिलो ह्म (ऽव्य)वस्थितश्चैव तथा सन्दष्ट एव च।
काकी च तुम्बकी च (चैव) पञच दोषा भवन्ति हि।।

अर्थात् कपिल, अव्यस्थित, सन्दष्ट, काकी तथा तुम्बकी पांच (कण्ठ) दोष हैं। स्वोल्लिखित इन पांचों दोषों के विषय में भरत मुनि ने विस्तृत व्याख्या प्रस्तुत की है। कपिल नाम कण्ठ दोष के विषय में भरत मुनि कहते **हैं** –

वैस्वर्य च भेवेद्यत्र तथा स्या (स्या) द् घर्घरायितम्।
कपिलः स तु विज्ञेयः श्रलेष्मकण्ठस्तथैव च।।

अर्थात् कण्ठ में स्थित कफ (श्लेष्म, श्लेष्मन्) के कारण जहाँ वैस्वर्य (बेसुरापन) तथा (ध्वनि में) घर्घराहट होती है वहाँ **कपिल** (दोष) जाना जाता है। भरत मुनि कण्ठ के अन्य दोष–अव्यवस्थित का वर्णन करते हुए कहते हैं–

ऊनताऽधिकता चापि स्वराणां यत्र दृश्यते।
रूक्षदोषहतच्श्रैव ज्ञेयः स त्वव्यवस्थितः।।

जहाँ स्वरों की कमी और अधिकता दिखती है, रूक्ष तथा हत (आहत) दोष भी (दिखते हैं) वह 'अव्यवस्थित' (दोष) है। तात्पर्य यह कि जिस गान में स्वर अपने निश्चित स्थान से कुछ ऊपर या नीचे के स्थान पर प्रयुक्त किए जाते हैं अथवा उनका रूखा (कड़ा) प्रयोग किया जाता है अथवा उन पर आहत करके (खड़ा–खड़ा) प्रयोग किया जाता है उस गान के अव्यवस्थ्ति कण्ठ दोष परिलक्षित होता है। भरत मुनि तृतीय दोष – 'सन्दष्ट' के विषय में कहते हैं–

दण्ड (न्त) प्रयोगात् सन्दष्टस्त्वाचार्यैः परिकीर्तितः।

अर्थात् आचार्यो द्वारा, दांत के प्रयोग के कारण (यह दोष) 'सन्दष्ट' कहा जाता है। तात्पर्य यह कि यदि दातों को अस्वाभाविक रूप से दबाकर गान किया जाता है तो वहाँ **संदश्ट** दोष उत्पन्न हो जाता है। सन्दष्ट दोष के पश्चात् काकी नामक कण्ठ दोष का वर्णन करते हुए भरत मुनि कहते हैं –

यो न विस्तरति स्थाने स्वरमुच्चारणागतम्।
तथा रूक्षस्वरच्श्रैव स काकीत्यभिसंज्ञितः।।

जो स्वर उच्चारित किए जाने पर (अपने) स्थान में (उचित रूप से) विस्तार न करता हो तथा जो रूखा हो वह **काकी** कहा जाता है। अंतिम कण्ठ दोष 'तुम्बकी' के विषय में भरत मुनि ने कहा है –

नासाग्रग्रस्तशब्दस्तु तुम्बु (म्ब) की सोऽभिधीयते।।

नासिका (की ध्वनि) से ग्रस्त शब्द (या स्वर) तुम्बुकी कहलाता है। तात्पर्य यह कि जिस गान में नासिका से उत्पन्न होने वाली, अनुस्वार के अंश युक्त ध्वनि का प्रयोग विद्यमान रहता है उस गान में **तुम्बकी** दोष दृष्टिगोचर होता है। मतंग मुनि के बृहदेशी ग्रन्थ का स्थान, कालक्रम के अनुसार नाट्यशास्त्र के पश्चात् आता है। बृहदेशी ग्रन्थ में काहुल, नराट, वोम्बक आदि ध्वनि भेदों का उल्लेख किया गया है परन्तु इस ग्रन्थ के खण्डित अवस्था में प्राप्त होने के कारण, इसमें गान के गुण–दोष की चर्चा प्राप्त नहीं होती।

३. मकरंदकार नारद काल

भरत मुनि के पश्चात् संगीत मकरंद ग्रन्थ में मकरंदकार नारद ने गायक–लक्षण के अन्तर्गत गायक के कण्ठगत स्वर के दस गुणों का उल्लेख किया है –

व्यक्तं पूर्णं प्रसन्नं च सुकुमारमलंकृतम्।
समं सुरक्तं श्लक्ष्णं च निकृष्टं मधुरं तथा।।

शिक्षाकार ने ही साम परम्परा तथा चौदह दोषों का नाम उल्लेख किया है जबकि मकरंदकार नारद द्वारा वर्णित गायक–दोष अस्पष्ट हैं।

४. नान्यभूपाल काल

भरत भाष्यम ग्रन्थ के रचनाकार नान्यभूपाल ने भी कण्ठ के गुणों का उल्लेख किया है। इस विषय पर नान्यभूपाल ने प्रायः भरत मुनि के मतों का अनुसरण किया है –

५. कण्ठगुणा

'श्रावकोऽथ घनः स्निग्धो मधुरो ह्मवधानवान्।
त्रिस्थान–शोभीत्येवं षट् कण्ठस्य च गुणाः स्मृताः।।

नान्यभूपाल ने इन छः कण्ठ गुणों के लक्षणों का भी वर्णन करते हुए भरत मुनि के कथनों का ही उद्धृत कर लिया है तथा स्वयं किसी पृथक् मत का उल्लेख नहीं किया है –

'दूरतः श्रूयते यच्श्र स वै श्रावक उच्यते।
श्रावकः सुस्वरो यस्मादच्छिद्रः स घनः स्मृतः।।
'अरूक्ष–ध्वनि–संयुक्तः स्निग्धस्तज्ज्ञैः प्रकीर्तितः।
घनः प्रस्फोटजनकः स वै मधुर उच्येते।।
'स्वरेऽधिके च हीने च ह्मविरक्तोऽवधानवान्।
शिरः कण्ठेष्वभिहतं त्रिस्थान–मधुर–स्वरैः।।
'त्रिस्थान–शोभीत्येवं तु स हि तज्ज्ञैः प्रकीर्तितः।।

इस प्रकार नान्यभूपाल ने भरत मुनि के मत का उल्लेख करने के पश्चात् उन्हीं के एक अन्य मत का भी उद्धरण प्रस्तुत किया है –

अथ गातृगुणानाह भरतः,''पूर्णस्वरं तत्र विलम्बि–वर्णम्।
त्रिस्थान–शोभि त्रिलयं त्रिमार्गगम्।। रक्तं समं श्रलक्ष्णमलड़्कृतं च ।
सुखं प्रसन्नं मधुरं च गानम्।।

यद्यपि नान्यभूपाल ने पूर्व प्रचलित गान–गुण विषयक दोनों मतों का वर्णन, भरत मतानुसार कर दिया है तथापि उनके ग्रन्थ में यह स्पष्ट संकेत प्राप्त नहीं होता कि वे स्वयं पूर्वाक्त किस मत को अधिक मान्यता प्रदान करते हैं। इस कारण ऐसा आभास होता है कि उन्होंने मात्र पूर्व परम्पराओं का अनुसरण करते हुए, गान के गुणों का उल्लेख किया है।
यद्यपि नान्यभूपाल ने गान के गुणों का उल्लेख भरत मुनि के समान किया है तथापि उन्होंने गान अथवा गीत के दोषों का उल्लेख शिक्षाकार के समान किया है। नान्यभूपाल ने गीत के चौदह दोष माने हैं–

६. गीतदोषा यथा

''शड़्कितं, भीतमद्धष्टमव्यक्तमनुनासिकम्।
काकस्वरं, शिरोगतं, तथा स्थान–विवर्जितम्।।
''विस्वरं, विरसं चैव, विश्रिलष्टं, विषमाहतम्।
व्याकुलं, तालहीनं च गीतदोषाच्श्रतुर्दश।।

अर्थात् गीत दोष इस प्रकार हैं – शंकित, भीत, उद्घृष्ट, अव्यक्त, अनुनासिक, काक स्वर, शिरोगत, स्थान–विवर्जित, विस्वर, विरस, विश्लिष्ट, विषमाहत, व्याकुल तथा ताल–हीन ये गीत के चौदह दोष हैं। गीत–दोषों के नामोल्लेख के पश्चात् नान्यभूपाल ने सभी गीत–दोषों के लक्षण भी वर्णित किए हैं–

शड्किंतं कम्पितं ज्ञेयं, भीतं नाम भ्यास्फुटम्।
रूक्षवर्णमथोद्घष्टं, अगीतं गुणवर्जितम्।।
अव्यक्तं दन्तसन्ष्टं नासोक्तमनुनासिकम्।
काकस्वरमतारं स्यान्मन्द्रहीनं शिरोगतम्।।
त्रिस्थान–विकलं गीतं भवेत्स्थानविवर्जितम्।,
विस्वर घर्घरं चैव विरसं रूक्षित–स्वरम्।।
संयोग–विच्युतं वर्ण विश्रिलष्टं प्रवदन्ति तत्।
नासौष्ठ–दन्त–जिह्वादि–वर्णानां विषमाहतेः।।
विषमाहतमित्येव ब्रूयुर्वेदविदो जनाः।
असंगतावृतं यच्च व्याकुलं तत्प्रचक्ष्यते।
अतालं मानहीनं च तालहीनं विदुर्बुधाः।।

तात्पर्य यह कि शंकित दोष में गायक का स्वर कम्पायमान रहता है। भीत दोष में गायक के भय को प्रदर्शित करने वाला गान दिखता है। रूक्ष वर्ण युक्त अर्थात् वर्णो में रूखापन, उद्घृष्ट दोष में परिलक्षित होता है। अव्यक्त के अन्तर्गत गायक दातों को दबाकर स्वरोच्चार करता है जिसके कारण उसका गान स्पष्ट रूप से सुनाई नहीं देता। अनुनासिका दोष में नासिका से उत्पन्न स्वरों का अन्तर्भाव रहता है। तार स्थान से अभाव–ग्रस्त काकस्वर तथा मन्द्र स्थान से हीन शिरोगत दोष हैं। तीनों स्थानों में दक्षता से स्वर न लगाने पर स्थान विवर्जित दोष उत्पन्न होता हैं। घर्घर स्वर युक्त दोष, विस्वर तथा रूखे स्वर युक्त विश्लिष्ट दोष कहा गया है। नासिका, ओंठ, दन्त अथवा जिह्वा द्वारा उत्पन्न स्वर अथवा वर्ण का असंगत आघात, विषमाहत दोष कहा गया है। असंगत अर्थात् अनिश्चित वृत्ति (क्रमपूर्वक प्रस्तुतिकरण या चलन) युक्त गान में व्याकुल दोष विद्यमान रहता है। ताल एवं गीत में विद्यमान 'मान' (निश्चित मात्रा में निश्चित स्वर व गीत के बोल उच्चारित करना, गीत व ताल का 'मान' कहलाता है) से विलग गान में तालहीन दोष जाना जाता है। इस प्रकार गीत के दोषों के लक्षणों का निरूपण करने के पश्चात् नान्यभूपाल ने कहा है कि ये चौदह गीत–दोष, नारद ने सामगान के अंतर्गत माने हैं–

अमी चतुर्दशेत्येवं गीतदोषा भवन्ति हि।
सामगानां प्रयोगे हि नारदेन प्रकीर्तिताः।।

यहाँ नान्यभूपाल ने 'शिक्षाकार नारद' का ही उल्लेख किया है, ऐसा भान होता है क्योंकि शिक्षाकार ने ही साम परम्परा तथा इन चौदह दोषों का नाम उल्लेख किया है जबकि मकरंदकार नारद द्वारा वर्णित गायक–दोष अस्पष्ट हैं।

नान्यभूपाल ने शिक्षाकार के मत का उल्लेख करने के पश्चात् इस विषय पर भरत–मत का भी उल्लेख किया है–

७. भरतः पुनराह

''कपिलोऽव्यवस्थितच्श्रैव तथा संदष्ट एव च।
काकी च तुम्बकी चैव कण्ठदोषा भवन्ति हि।।
वैस्वर्य च भवेद्यात्र तथैव घर्घरायितम्।
कपिलः स तु मन्तव्यः श्रलेष्मकण्ठस्तथैव च।।
ऊनताऽधिकता वाऽपि स्वराणां यत्र दृश्यते।

कण्ठदोषहतच्श्रैव ज्ञेयः स त्वव्यवस्थितः।।

इस प्रकार नान्यभूपाल ने भरतोक्त कपिल, अव्यवस्थित, संदष्ट, काकी तथा तुम्बकी पांच दोषों का नामोल्लेख किया है। तत्पश्चात् नान्यभूपाल ने कपिल व अव्यवस्थित दोषों का लक्षण–वर्णन भरतानुसार किया है किन्तु शेष तीन दोषों में से संदष्ट व काकी के विषय में नान्यभूपाल ने अन्य मतों का अनुसरण किया है –

'स्वरो यो..................लक्ष्यान्त (?) दन्तान्तरविनिःसृतः।
कण्ठदेशे प्रतिहतः स संदष्ट इति स्मृतः।।
'यो न विशृणुते भावं स्वर उच्चारणे गतः।
तथा रूक्षस्वरच्श्रैव स काकीत्यभिधीयते।।

यद्यपि उपरोक्त कथन में प्रथम श्लोक अपूर्ण है तथापि इससे संकेत प्राप्त होता है कि दातों को दबाकर गान करने से, कण्ठ में ही स्वरों के अवरूद्ध हो जाने पर संदष्ट दोष उत्पन्न हो जाता है। काकी दोष का उल्लेख करते हुए कहा गया है कि जो स्वर उच्चारित किए जाने पर भाव को उत्पन्न नहीं करता तथा रूखा होता है उसमें काकी दोष परिलक्षित होता है। इनके अतिरिक्त नान्यभूपाल ने तुम्बकी नामक दोष के विषय में कोई विवरण प्रस्तुत नहीं किया है।

८. पं. शार्ङ्गदेव काल

नान्यभूपाल के पश्चात् पं0 शार्ङ्गदेव ने गीत के दस गुणों का वर्णन किया है। पं0 शार्ङ्गदेव ने इस विषय पर प्रायः मकरंकदकार के समान ही स्वमत का प्रतिपादन किया है –

९. गीतगुणा

व्यक्तं पूर्णं प्रसन्नं च सुकुमारमलंकृतम्।
स्मं सुरक्तं श्र्लक्ष्णं च विकृष्टं मधुरं तथा।।
दशैते स्युर्गणा गीते ....।

पं. शार्ङगदेव ने गीत के दस गुणों का नामोल्लेख करने के पश्चात् उनके लक्षणों का वर्णन भी मकरंदकार के कथनों के समान ही, कुछ संशोधन के साथ प्रस्तुत किया है–

दशैते स्यर्गुणा गीते तत्र व्यक्तं स्फुटैः स्वरैः।
प्रकृतिप्रत्ययैच्श्रोक्तं छन्दोरागपदैः स्वरैः।।
पूर्ण पूर्णाङ्गगमकं प्रसन्नं प्रकटार्थकम्।
सुकुमारं कण्ठभवं त्रिस्थानोत्थमलंकृतम्।।
समवर्णलयस्थानं सममित्यभिधीयते।
सुरक्तं वल्लकीवंशकण्ठध्वन्येकतायुतम्।।
नाचोच्चद्रुतमध्यादौ श्र्लक्ष्णत्वे श्र्लक्ष्णमुच्यते।
उच्चैरूच्चारणदुक्तं विकृष्टं भरतादिभिः।।
मधुरं धुर्यलावण्यपूर्ण जनमनोहरम्।

पं. शार्ङ्गदेव ने गीत के दोषों पर चर्चा करते हुए पूर्वाचार्यो के मतों से भिन्न मत प्रस्तुत किया है। उन्होंने गीत के दस दोष बताए हैं –

दुष्टं लोकेन शास्त्रेण श्रुतिकाल विरोधी च।।
पुररूक्तं कलाबाह्मं गतक्रममपार्थकम्।
ग्राम्यं संदिग्धमित्येवं दशधा गीतदुष्टता।।

अथात् गीत के दस दोष हैं– लोकेन, शास्त्रेण, श्रुति एवं काल विरोधी, पुनरूक्त, कलाब्राह्म, गतक्रम, अपार्थक, ग्राम्य तथा संदिग्ध। तात्पर्य यह कि गीत अथवा गायन में दस पृथक्–पृथक् कारणों से दोष उत्पन्न होते हैं– लोक के द्वारा, शास्त्र के द्वारा, श्रुति एवं काल के विरोध से, बारम्बार प्रयोग से, कला के अतिक्रमण से, निर्देशित क्रम के उल्लंघन द्वारा, अर्थ पर ध्यान न देने से, गीत में सभ्यता का ध्यान न देने से तथा संदिग्ध रहने से। पं0 शार्ङ्गदेव ने गीत के दस दोषों का उल्लेख करने के पश्चात् उनकी व्याख्या प्रस्तुत नहीं की है अतः उनके द्वारा वर्णित दोष पूर्णतया स्पष्ट नहीं होते।

१०. सारांश

जब मानव समाज अपने जीवन के किसी भी पक्ष के प्रारम्भिक एवं प्राथमिक स्तर से आगे बढ़कर, उस पक्ष पर गहन विचार एवं मन्थन कर, उसे परिष्कृत करने का प्रयास करता है तब मानव समाज को अपने उस विशिष्ट पक्ष में विभिन्न गुण एवं त्रुटियाँ दृष्टिगोचर होती हैं। भरत मुनि ने नाट्यशास्त्र ग्रन्थ के तैतीसवें अध्याय के अन्तर्गत गान के गुण–दोषों का उल्लेख किया है। यद्यपि नान्यभूपाल ने पूर्व प्रचलित गान–गुण विषयक दोनों मतों का वर्णन, भरत मतानुसार कर दिया है तथापि उनके ग्रन्थ में यह स्पष्ट संकेत प्राप्त नहीं होता कि वे स्वयं पूर्वाक्त किस मत को अधिक मान्यता प्रदान करते हैं। इस कारण ऐसा आभास होता है कि उन्होंने मात्र पूर्व परम्पराओं का अनुसरण करते हुए, गान के गुणों का उल्लेख किया है। यद्यपि नान्यभूपाल ने गान के गुणों का उल्लेख भरत मुनि के समान किया है तथापि उन्होंने गान अथवा गीत के दोषों का उल्लेख शिक्षाकार के समान किया है। बृहदेशी ग्रन्थ में काहुल, नराट, वोम्बक आदि ध्वनि भेदों का उल्लेख किया गया है परन्तु इस ग्रन्थ के खण्डित अवस्था में प्राप्त होने के कारण, इसमें गान के गुण–दोष की चर्चा प्राप्त नहीं होती। पं. शार्ङगदेव ने गीत के दस गुणों का नामोल्लेख करने के पश्चात् उनके लक्षणों का वर्णन भी मकरंदकार के कथनों के समान ही, कुछ संशोधन के साथ प्रस्तुत किया है। मनुष्य स्वभावतः ही अपने जीवन तथा उसके विभिन्न पक्षों के स्तर को उच्च कोटि का, बनाने के लिए प्रयासरत रहता है। इसके लिए वह सदैव उनमें स्थित दोषों को त्यागने तथा गुणों को अधिक से अधिक ग्रहण करने का प्रयास करता है जिससे उसे अधिक से अधिक मानसिक एवं आत्मिक ज्ञान तथा शांति प्राप्त हो सके।

संदर्भ ग्रन्थ

१. नारदीय शिक्षा –नारद मुनि–भट्ट शोभाकर–श्रीपीताम्बरापीठ सस्कृत परिषद, दतिया
२. नारदीय शिक्षा में संगीत–मनीष डंगवाल–राज पब्लिकेशन, नई दिल्ली
३. नाट्यशास्त्र–भरत मुनि–एम. रामकृष्ण कवि–ओरिएन्टल इंस्टिट्यूट, बड़ौदा
४. नाट्यशास्त्र–भरत मुनि–श्री बाबूलाल शास्त्री–चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी
५. बृहद्देशी–मतंग मुनि–बालकृष्ण गर्ग– संगीत कार्यालय, हाथरस
६. संगीत मकरदं –नारद–गायकवार्ड सिरीज
७. संगीत मकरंद–नारद–लक्ष्मीनारायण गर्ग–संगीत कार्यालय, हाथरस
८. भरत भाष्यम्– नान्यभूपाल–चैतन्य पुण्डरीक देसाई–इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय, खैरागढ़
९. संगीत रत्नाकर–पं. शार्ङ्गदेव–आनन्दाश्रम संस्कृत ग्रन्थावली
१०. भारतीय संगीत का इतिहास–डॉ. शरच्चन्द्र श्रीधर परांजपे–चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी
११. भारतीय संगीत का इतिहास–डॉ. ठाकुर जयदेव सिंह–संगीत रिसर्च अकादमी, कलकत्ता
१२. संगीत बोध–डॉ. शरच्चन्द्र श्रीधर परांजपे–म. प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल
१३. Sangita Ratnakara-Sarangadeva-Pt. S.S. Sahtri-The Adyar Library and Research Center, Madras.
१४. Brhaddesi of Matanga Muni-Prem Lata Sharma-I.G.N.C.A., New Delhi.
१५. Nardiya Siksa-Narada Muni-Usha R. Bhise-Bhandarkar Oriental Research Institute, Pune.